कवि परिचय

पं. शिवकुमार मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जनपद की करहल तहसील के अन्तर्गत आने वाले सढ़ ग्राम में चैत्र शुक्ल चतुर्थी सोमवार विक्रम सं. 2015 को हुआ, अर्थात् 24 मार्च–1958 को हुआ। उनके दादा पं. होरीलाल मिश्र गॉव के सम्मानित व्यक्ति थे और उनकी दादी श्रीमती कलावती देवी मिश्र का अप्रतिम वात्सल्य बालक शिवकुमार पर सदा बना रहा। पिता श्री भगवान दयाल मिश्र म.प्र.शासन के पुलिस विभाग में भोपाल में कार्यरत रहे, जो अब सेवानिवृत्त हैं। माताजी श्रीमती रामसहेली अत्यंत धार्मिक और स्नेहशीला थी। जिनका देहावसान 10 फरवरी–2006 में हुआ।

मिश्र जी की प्रारंभिक शिक्षा प्राथमिक स्कूल तक गॉव में ही हुई तत्पश्चात वे भोपाल आ गए। वहॉ उन्होने 1977 में बी.ए. तथा 1979 में भूगोल विषय से एम.ए. की उपाधि तत्कालीन भोपाल विश्वविद्यालय से प्राप्त की। वे प्रारंभ से ही प्रतिभा के धनी रहे है और वे ऐसे विरले छात्र हैं जिन्होने लगातार 5 वर्ष विश्वविद्यालय में सर्वोच्च अंक प्राप्त कर प्रथम स्थान प्राप्त किया। वे संस्कृत के प्रकांड विद्वान श्री रामकृष्ण सराफ तथा भूगोल विषय के अन्वेषक विद्वान श्रीयुत शंकर प्रसाद तिवारी के अत्यंत प्रिय शिष्य रहे हैं, जिन्होने अपने छात्र का उत्साह सदैव बढ़ाया।

वर्ष–1981 से 1984 तक वे महाराष्ट्र बैंक में कार्यरत रहे और 1984 की सिविल सेवा परीक्षा के आधार पर केन्द्रीय सचिवालय सेवा में नियुक्त हुए तथा कुछ माह दिल्ली में आपूर्ति मंत्रालय में पदस्थ रहे। 1985 की सिविल सेवा परीक्षा के आधार पर उनका चयन आई.ओ.एफ.एस. में हो गया। तब से वे जबलपुर, कटनी, कानपुर, इटारसी आदि स्थानों में स्थित रक्षा उत्पादन विभाग की इकाइयों में विभिन्न पदों पर कार्यरत रहे। वर्ष 1993 से 1994 तक वे केन्द्रीय कृषि मंत्रालय में अवर सचिव तथा 1994 से 1997 तक कृषि मंत्रालय में ही उप सचिव रहे।

मिश्र जी की साहित्यिक यात्रा मार्च 1989 में प्रारंभ हुई जब वे कटनी (तत्कालीन जबलपुर जिला म.प्र.) में पदस्थ थे। एक ही दिन में ईश्वर और मॉ शारदा की कृपा से 40 पद्य लिखे गए और इस प्रकार कर्ण के चरित्र पर आधारित 'राधेय' महाकाव्य का प्रणयन हुआ। यह लेखन कार्य ढ़ाई वर्ष चला, वर्ष 1995 में 'राधेय' का प्रकाशन दिल्ली से हुआ। इस ग्रंथ की भूमिका

महान् विद्वान डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने लिखी और इसे महामहिम तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीयुत शंकरदयाल शर्मा का आशीष प्राप्त हुआ। हिंदी साहित्य के भीष्म पितामह डॉ. नगेन्द्र ने इस ग्रंथ को सराहा।

1996 में दिल्ली में ही अस्वस्थामा का लेखन प्रारंभ हुआ और अनेक व्यवधानों के बाद सन् 2003 में कानपुर से इसका प्रकाशन हुआ। इसकी भूमिका डॉ. बालशौरि रेड्डी ने लिखी और इसे हिंदी के वरिष्ठ विद्वानों श्री मोहन अवस्थी जी तथा आचार्य सेवक वात्सायन का आर्शीवाद प्राप्त हुआ। इस ग्रंथ का विमोचन कानपुर में ही उ.प्र. के तत्कालीन राज्यपाल महामहिम डॉ. विष्णुकांत शास्त्री के कर कमलों से हुआ। तत्पश्चात् म.प्र. के इटारसी नगर में पदस्थापना के दौरान चाणक्य पर अपनी लेखनी चलाई और यह ऐतिहासिक उपन्यास लगभग पूर्ण हो चुका है। इसके पूर्ण होने के पूर्व ही मई–2009 से जुलाई–2009 तक 06 अध्यायों के 'मरूस्थल' नाम के खंड काव्य का प्रणयन किया और उसी वर्ष सितम्बर से जनवरी तक 05 माह की अल्पावधि में 'देवव्रत' नामक महाकाव्य की रचना की जिसमें 20 सर्ग और 13 सौ से अधिक पद्य हैं। इन तीनों ग्रंथों का प्रकाशन अभी प्रतीक्षित है। इस प्रकार मिश्र जी ने मॉ सरस्वती को 03 महाकाव्य रूपी सुमन अर्पित किए हैं।

आज के युग में हिंदी कविता के क्षेत्र में लेखकों में नए प्रयोगों का आग्रह और परम्परागत नीति और नियमों को भंग करने का अतिशय उत्साह दिखता है। मिश्र जी ने इस धारा के विरूद्व परम्परा की ही भागीरथी को प्रवाहित किया है। उनके ग्रंथ छंदोबद्ध है। पौराणिक पृष्ठभूमि होने पर भी काव्यों में चिरंतन मूल्यों की स्थापना के साथ–साथ नवोन्मेष भी है।

सहृदय, जिज्ञासु, भारत की परम्परा के प्रति निष्ठावान, चिरंतन मूल्यों के आग्रही और आर्य संस्कृति के स्वाभिमानी पाठकों को उनके ग्रंथ मोद वर्धन होंगे।

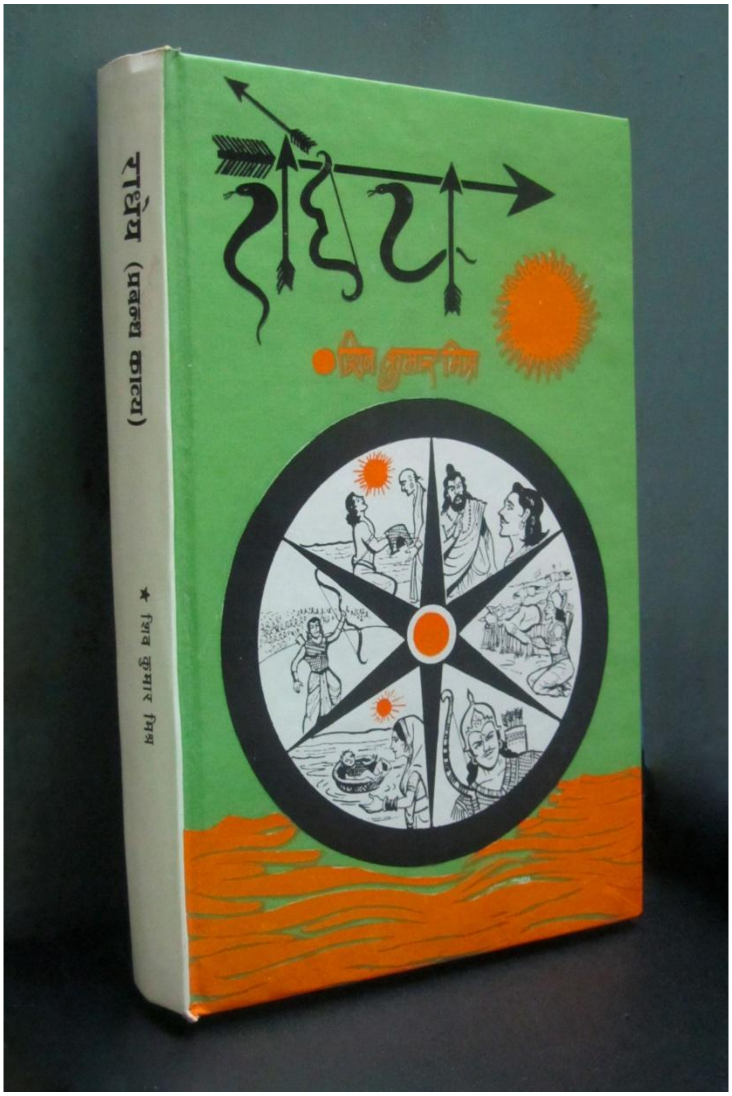
राधेय (प्रबन्ध काव्य)
★ शिव कुमार मिश्र
राधेय
शिव कुमार मिश्र

राधेय काव्य पर एक दृष्टि

मैंने श्री शिव कुमार मिश्र द्वारा प्रणीत "राधेय" महाकाव्य का सम्यक् रूप से अवलोकन किया है। कर्ण के चरित्र में अपने प्रबल अंतर्द्वंद्व के कारण महाभारत के अन्य पात्रों की अपेक्षा नाटकीय संभावनाएँ कहीं अधिक रही हैं। इसलिए वह भारत की प्रायः सभी भाषाओं के कवि-कलाकारों में अत्यंत लोकप्रिय रहा है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की पहली विशेषता तो यह है कि कवि की सर्जनात्मक प्रतिभा पहली बार इसी काव्य में प्रस्फुटित हुई है। इससे पहले उन्होंने मुक्तक या प्रगीत की रचना भी नहीं की। यह घटना विचित्र होने पर भी सत्य है।

भारतीय काव्यशास्त्र के आचार्यों ने कवि को यह अधिकार दिया है कि वह अपने पूर्ववर्ती कथा-वस्तु में दो प्रकार के परिवर्तन कर सकता है,

§1§ विद्यमान का संशोधन और

§2§ अविद्यमान की कल्पना.

प्रस्तुत काव्य में श्री मिश्र ने इस अधिकार का बड़े कौशल के साथ उपयोग किया है और अनेक प्रसंगों को अपनी मौलिक उद्भावनाओं के द्वारा और अधिक मार्मिक बना दिया है। भाषा-सौष्ठव एवं विविध छन्दों के साधिकार प्रयोग ने काव्य के सौन्दर्य की निश्चय ही श्रीवृद्धि की है। मुझे विश्वास है कि कर्ण के चरित्र पर रचित हिन्दी-काव्यों की श्रृंखला में "राधेय" का अपना विशेष स्थान होगा।

नगेन्द्र

डा० नगेन्द्र

15.04.1996

134, वैशाली,

पीतमपुरा, नई दिल्ली- 110034.

VIDYA NIWAS MISRA
Vice-Chancellor
Sampurnanand Sanskrit University
VARANASI - 221 002

Grams : SHRUTAM
Phones { Office 43911
Resi. 43830

No...................................
Date..................................

श्री शिव कुमार मिश्र ने अपने प्रबन्ध काव्य महाभारत की कथा के अप्रतिम पात्र कर्ण को केन्द्र में रखकर रचा है। मैंने इसे आद्यन्त पढ़ा। यह काव्य मुझे दो दृष्टियों से उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण काव्य लगा। एक इसकी आख्यान योजना सुगठित और सुसम्बद्ध है। महाभारत के कर्ण से जुड़े आख्यानों का जिसमें संयोजन इस प्रकार किया गया है कि महाभारत की कथावस्तु से विचलन भी नहीं है और उसमें प्रत्येक स्थल पर एक नवोन्मेष है। श्री कृष्ण अवतारण के सम्बन्धको गहरी समझ से व्यक्त किया गया है। मैंने कर्ण को केन्द्र में रखकर लिखी गयी अनेक रचनायें पढ़ी, उनमें कर्ण का उन्नयन श्रीकृष्ण को तरह देकर किया गया है जो महाभारत के तात्पर्य से प्रतिकूल है। स्व० पं० लक्ष्मीनारायण मिश्र के काव्य में सारी अच्छाइयों के बावजूद यह खटकने वाली बात है कि महाभारत के मूल ... अभिप्राय के प्रतिकूल कृष्ण के चरित्र का महत्व कम किया गया है।

कर्ण के दो उल्लेखनीय मानवीय मूल्यों को विशेष रूप से यह रेखांकित किया गया है - दानशीलता और कृतज्ञता। ये दोनों गुण ही कर्ण के नाश के कारण भी बनते हैं क्योंकि कहीं न कहीं इन दोनों का अहंकार कर्ण के मन में है और भारतीय ट्रैजडी की अवधारणा में नियति से जूझना त्रासदी का मूल नहीं है न देवताओं का अकृपा झेलना मूल में है। हमारी ट्रैजडी की अवधारणा विवेक के भ्रंश से उद्भूत है और विवेक का भ्रंश तभी होता है जब मनुष्य को अपनी किसी विशिष्टता का अहंकार हो जाता है। इसलिये कभी-कभी गुण दोष बन जाते हैं। श्री शिव कुमार जी ने इसको ठीक तरह पकड़ा। उनका आख्यान अपने में समग्र है पर महाभारत से विलग नहीं है।

इस काव्य की दूसरी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसका काव्यबन्ध परिपक्व है, छन्द की योजना में समंजस है। भाषा आख्यान काव्य के अनुरूप है। ऐसे पौराणिक विषय पर लिखे गये काव्य में तत्सम शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक है विशेषकर उन शब्दों का जिनमें सांस्कृतिक अर्थ निहित होते हैं। सम्प्रेषण में कठिनाई न हो, इसके लिये रचनाकार ने ऐसे शब्दों का प्रयोग कम किया है।

मैं श्री शिव कुमार मिश्र की काव्य-यात्रा की मंगलकामना करता हूं।

Vidya Niwas Misra

(विद्यानिवास मिश्र)

दिनांक: जनवरी २७, १९९२

एक दृष्टि

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

महाभारत में कर्ण का चरित्र लीलापुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के चरित्र के बाद सर्वाधिक महान और आकर्षक है। शौर्य, शिष्टता, सत्य और दानशीलता उसमें मूर्तिमान होकर अवतरित हुए थे। महाभारतकार ने उसके देवोपम गुणों का आगार बताते हुए उसकी महानता को इतने प्रकार से रेखांकित किया है कि मन में औदात्य का आवेग उमड़ पड़ता है। कुन्ती का कानीन पुत्र होकर भी वह जीवन भर सूतपुत्र के नाम से ही संबोधित किया गया। अंगराज होकर भी वह अभिजात क्षत्रियों की कोटि में नहीं आ सका। पर उसके तेज और अपार रणकौशल के सामने सभी अभिहत थे। महर्षि वेदव्यास ने कर्ण की कथा के विविध प्रसंगों में जिस प्रकार उद्भासित किया है उससे पाठक चमत्कृत हो उठता है।

हिन्दी में कर्ण के कीर्तिधवल चरित्र को लेकर अनेक काव्य लिखे गये हैं। संस्कृत एवं इतर भारतीय भाषाओं की बात मैं नहीं कह सकता। आज के युग में जब उपन्यास को महाकाव्य का उत्तराधिकारी माना जाता है मराठी के श्रेष्ठ उपन्यासकार शिवाजी सावंत द्वारा लिखित 'मृत्युंजय' उपन्यास भी एक महाकाव्य का ओजपुंज और कान्ति लिये है। हिन्दी में केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', रामधारी सिंह दिनकर और आनंदकुमार ('अंगराज' के कवि) के बाद मेरी जानकारी में 'राधेय' कर्ण की

जीवन कथा को लेकर लिखा गया नवीनतम काव्य है जो मेरे पढ़ने में आया है। चौदह सर्गों के इस प्रबंध में लगभग एक हजार पचास पद्यों में, हिन्दी और संस्कृत के विविध प्रकार के छंदों का प्रयोग कर लेखक ने भाव-चित्रण पूर्ण शैली में कर्ण के चरित्र का वर्णन किया है। हिन्दी के प्रचलित छंदों के साथ संस्कृत के शार्दूल, प्रमाणिका, शालिनी, दोधक, तोटक, भुजंग, पंचचामर, चित्रपदा, शालिनी तथा भुजंगप्रयात जैसे वृत्तों का भी प्रयोग किया गया है जो तुकान्त हैं।

लेखक ने हर सर्गों में एकप्रकार के छंद रखे हैं किन्तु कई सर्गों में विविध छंदों का प्रयोग किया है जो प्रसंगानुकूल प्रतीत होता है। अलंकार-योजना में कवि संस्कृत के भारवि, माघ और हिन्दी के आचार्य केशवदास से विशेष प्रभावित प्रतीत होता है। कौतूहल या चमत्कार प्रकट करने की ओर कवि की विशेष प्रवृत्ति है जो काव्य के पाठक को कहीं कहीं पर अतिशयोक्ति पाठक को अस्वाभाविक लगेगी। आजीवन उपेक्षा-व्यथा से अंगार बने रहनेवाले कर्ण के पश्चात्ताप से आरंभ होकर कुन्ती के शोक में ही समाप्त होने वाला यह परिणाम देख लिखा गया काव्य कुन्तीनन्दन का शीर्षक लिये है। अन्य पुराणों से महाभारत में कुन्ती का चरित्र भी अद्भुत है। जीवनभर कलेश, संत्रास और पराभव झेलनेवाली यह वीरप्रसवा राजनारी पांडु जैसा कमजोर पति पाकर और उसको असमय खोकर लालायित नहीं रह सकती! यदि भगवान् अंधों को बहुत ऊंचाई दे तो कुन्ती जैसी नारी की उपमा धरती का गहना है।

कृष्ण जैसे सर्वशक्तिमान की कृपा होकर भी वह अपने को हर परिस्थिति में असहाय ही पाता है। इस का करुण विलाप मन को स्पर्श करने वाला है —

। या दुर्भाग्य लिपट बचपन से, फूट फूट कर रोऊँ
इसमें बड़ा और दुःख है, जिससे बचा पाए कोई
मेरी जीवन-नौका बहती रही सदा दलदल पर
मृत्यु का कोना है न अबकी यह दाग लगा अंचल पर

तुम तो हरि सर्वज्ञ जानते मन की व्यथा हमारी
तुम सोचो पर करें कौन विधि हम भी सहज तुम्हारी
क्या बोला था अंतिम क्षण में कुछ तो मुझे बताओ
कैसे जीता जीव स्वतंत्रता में मुझसे कुछ न छिपाओ

परन्तु कर्ण असहाय स्थिति है – कौन्तेय नहीं। कुंती के प्रति कभी उसके मन में आत्मभाव जागा ही नहीं। यह संभव नहीं लगता कि उसको समझ कुंती की स्वीकारोक्ति के पहले उसमें सहज प्रेमभाव जागा ही हो कि वह कौन है। कुल और जाति के अहंकार के इस युग में कर्ण के भीतर अपने वीरत्व और पौरुष का अहं था। सत्यनिष्ठ, पालक दे न के गौरवबोध से हटकर कर्ण अपने सामर्थ्य के बल पर जीना और मरना चाहता है। राजाओं, रानियों और क्षत्रियों के संग्राम में डूबते वर्ग – सूतवर्ग का शोषितभाव हो चुका था। उसकी सामाजिकता और जातीय हीनता ही अलग थी। पर कर्ण विद्रोह की मानसिकता में ढल गया। उसकी अनेक मनोस्थिति में यही दृष्टिगत होता है। पालक सूतपिता, माता राधा से उसे जो सहज अकृत्रिम वात्सल्य मिला, उसके भी वह आभारी था – आजीवन रहा।

डा. इन्द्रनाथ चौधुरी ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ मूल्यांकन
और श्रीमती दुर्गा भागवत ने व्यास पर्व में कर्ण के
सम्बन्ध में — उसके चरित्र का विश्लेषण करते हुए
अनेक मनोविश्लेषण तथा प्रस्तुत किये हैं। इस
काव्य में कवि ने कर्ण के जीवन की समग्र सकारात्मक
अपने छंदों में बाँधने की चेष्टा की है। उसकी भाषा
पारिभाषिक है, कर्ण के जीवन प्रसंगों को उद्घाटित करने
उसमें ध्वन्यात्मकता भी है। पर केवल शैली में प्रभावात्मकता
है जो वैचारिक आलोचकों की उक्ति में बाँधना
होती है। विनायक के ... की शान्त में — बिल्कुल
अन्तिम छंद में श्रीकृष्ण द्वारा युधिष्ठिर से कहलाया है —

समझा कर अपने मन को भाइ भाइ में
पितामह की तरह सम्मान करो
मिलता का नाम होता उस है
जगत के ज्योति का होता उस है

डायरी में कवि ने जितना ध्यान उसके प्रबंध वैशिष्ट्य —
शिल्प प्रसाधन पर कवि ने दिया है उतना यदि कर्ण
के वास्तविक अन्तर्द्वन्द्व और उसकी लोकप्रियता
के ... को उभारने का और दिया जाता तो
प्रबंध काव्य और भी प्रभावशाली बन जाता।

कथाविन्यास, कर्ण के मार्मिक प्रसंगों की
पहचान और ... , अलंकारों के ...
प्रयोग और सर्गविभाजन आदि की दृष्टि से ...
... प्रबंध ... की ...। कवि ने जो
शैली अपनाई है उसके ... में वह कहीं
भी पद्य-च्युत नहीं हुआ। मुझे आशा है हिन्दी
जगत में इस रचना का ... स्वागत
होगा।

Phones :
HIMACHAL PRADESH UNIVERSITY
SUMMERHILL, SHIMLA-171005

योगी एवं कवि — दोनों ही वाणीरूपी गाय दुहते हैं। परन्तु दोहन की प्रक्रिया उभयत्र सर्वथा भिन्न है। वाणी के परा, पश्यन्ती एवं मध्यमा रूपों तक पहुँचा हुआ योगी उसे बलपूर्वक दुहता है — दुर्धर्ष यौगिक क्रियाओं की 'नोय' के बल पर। परन्तु सहृदयशिरोमणि कवि वाग्धेनु को दुहता है स्वयं क्षीरपायी वत्स (बछड़ा) बनकर! और जब आत्माराम कवि बछड़ा बन कर मनुहार करने लगता है तो ममता की डोर में बँधी गायरूपी भगवती सरस्वती स्वयमेव 'प्रस्नुतस्तनी' हो उठती है। वह मारे वात्सल्य के अपना क्षीरामृत स्वयं प्रकट कर देती है और, वही क्षीरामृत है कविता!

दशमशती ई० के यशस्वी काश्मीरक आचार्य भट्टनायक का कवितविषयक यह मन्तव्य आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना तब था —

वाग्धेनुर्दुग्ध एतं हि रसं यद्बालतृष्णया।
तेन नास्य समः स स्याद् दुह्यते योगिभिर्हि यः॥

काव्य वही चिरन्तन एवं शाश्वत होता है जो हंसवाहिनी की कृपा से समुद्भूत हो। ऐसा काव्य संस्कारजन्य परा प्रतिभा का समुच्छलन होता है। उस काव्य की अभिव्यक्ति में कवि तो 'निमित्तमात्र' होता है। वह एक 'आवेश' अथवा 'सम्मोहन' की स्थिति में मुक्तक से लेकर स्थूल-कलेवर महाकाव्य तक लिख जाता है और प्रकृतिस्थ होने पर स्वयं अपनी रचना को विस्मितनेत्रों से पढ़ने लगता है। वस्तुतः ऐसी परिस्थिति में वाग्धिष्ठात्री, कवि को माध्यम बना कर स्वयं अपने को अभिव्यक्त करती है।

कविता की यह शास्त्रसम्मत भूमिका मैंने सारस्वत-साधक श्री शिवकुमार मिश्र के सन्दर्भ में लिखी है जिनका 'राधेय' महाकाव्य पिछले वर्ष (1995) प्रकाशित हुआ है। श्रीमिश्र एक प्रतिष्ठित अधिकारी हैं केन्द्रीय कृषि मंत्रालय, नई दिल्ली में। वह 'भारतीय प्रशासनिक सेवा' से जुड़े हैं। कविकर्म उनका 'तटस्थ' लक्षण हो सकता है, स्वरूपलक्षण नहीं। वह विद्यानुरागी अवश्य हैं, विपश्चित् हैं, काव्य-शास्त्रविनोद से समय बिताते हैं। यह सब होते हुए भी, वह विश्वविद्यालयीय आचार्यों की तरह साहित्य के अध्ययन-अध्यापन से जुड़े नहीं हैं। साहित्यसर्जना की मूलधारा से विच्छिन्न होकर भी उन्होंने 'राधेय' जैसा विशाल हिन्दी महाकाव्य लिखा है जिसकी पदशय्या, संवाद, प्रकरणवक्रता एवं छन्दोविचिति — सब कुछ अत्यन्त उच्च-स्तरीय एवं निरवद्य है।

'राधेय' की सर्जना से यह सिद्ध हो जाता है कि कवित्व एक दैवी गुण मात्र है। अन्यथा समूचे राष्ट्र में हिन्दी के प्राध्यापक, समीक्षक, विद्वान भरे पड़े हैं। कोई एक छन्द भी नहीं लिख पाता है। परन्तु रातदिन कार्यालय-पञ्जिकाओं में उलझा रहने वाला एक उच्चाधिकारी पूरी तन्मयता से एक श्रेष्ठ महाकाव्य की सृष्टि कर रहा है — दुर्निवार गति से! निश्चय ही इस साहित्यकल्प के लिये शिवकुमार जी समस्त राष्ट्रभाषा-नुरागियों की शुभकामनाओं के पात्र हैं।

'राधेय' महाकाव्य है जिसका उपजीव्य है भग-वान् कृष्णद्वैपायनप्रणीत महाभारत! इस महाकाव्य का नायक है द्वापरयुगीन महारथी, महावदान्य सूर्यपुत्र कर्ण — जिसके अप्रति-हत पौरुष ने ही कुरुराज दुर्योधन को कुरुक्षेत्र के महासमर में दीक्षित किया! यदि महारथी कर्ण न होता तो महाभारत-युद्ध भी न होता — यह एक ध्रुव सत्य है। कर्ण दुर्योधन का आत्मविश्वास था, उसका उद्धत अहंकार था, उसकी युयुत्सा का मूलाधार था।

Phones :
HIMACHAL PRADESH UNIVERSITY
SUMMERHILL, SHIMLA-171005

एक विलक्षण जीवन जिया इस अभिशप्त महारथी ने। सर्वगुणसम्पन्न होते हुए भी कर्ण के गुणों का समाज में आदर नहीं हो पाया। धनकुबेर के वंशज को, विवश परिस्थितियों में, भीख माँगने की जो दारुण व्यथा होती है — कर्ण की व्यथा कुछ वैसी ही थी। उसे ज्ञात था कि वह सूर्यपुत्र है। उसकी त्वचा के साथ संवलित दिव्य कवच तथा कुण्डल, उसकी दैवी तेजस्विता के प्रमाण थे। परन्तु सामाजिक स्तर पर वह एक रथकार की सन्तति मात्र था। बस, इसी एक लाञ्छना ने महारथी कर्ण की नियति बदल दी। उसके प्रत्येक अभ्युत्थान-क्षण में यही 'रथकारता' बाधक बनती रही। भगवान परशुराम से विद्याप्राप्ति, कौरव-पाण्डव राजकुमारों के साथ शस्त्रप्रति-स्पर्धा, अर्जुन के साथ द्वन्द्व-सन्दर्भ तथा पाञ्चाली परिणय में मत्स्यवेध — इन सारे प्रसंगों में कर्ण की सफलता निश्चित थी। परन्तु उसे पद-पद पर अपमानित, लांछित एवं न्यक्कृत होना पड़ा। कर्ण सुलगता रहा आत्मसन्ताप एवं सामाजिक वैषम्य की आग में। महर्षि दुर्वासा से उसने कहा-

हृदय व्यथित होता है गुरुवर देख विषमता जग की
सार्थकता सन्दिग्ध हो रही आज हमारे मग की।
वर्णभेद-वैषम्य, अवरता का करता अनुमोदन
इस विधान से दलितों का क्यों होगा भला! प्रयोजन!!

— राधेय 20 80

प्रत्येक कवि अपने नायक का व्यक्तित्व स्वयं गढ़ता है — यथाऽस्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते। भाई 'शिवकुमार जी ने भी अपने 'राधेय' को प्रतिभा की तूलिका से गढ़ा है अपनी रुचि के अनुसार! परन्तु यह सौभाग्य की बात है कि उनके राधेय की गढ़न, न केवल 'सत्य-शिव

तथा कुरुक्षेत्र की साधिका है अपितु वर्तमान भारतीय समाज की अनेक ज्वलन्त समस्याओं का समाधान भी है। वह समाधान कवि प्रस्तुत करता है राधेय मुख से।

करनी है समाज-संरचना जहाँ सौख्य-समता हो
निज कुटुम्ब तक ही परिसीमित जहाँ न मृदु ममता हो।
हो सबको अधिकार जहाँ पर मानवोचित जीवन का
मन मारना या करना अभिमान न हो बड़प्पन का॥
- राधेय पृ० 80

जैसा मैंने प्रारंभ में ही कहा है महाभारत युद्ध का मेरुदण्ड था कर्ण। यदि पाञ्चाली (दुर्योधन का अपमान करने के कारण) उस युद्ध का 'निमित्त कारण' थी तो सूर्यपुत्र कर्ण 'उपादान कारण'। कर्ण की सामाजिक अप्रतिष्ठा को, 'अंगराजता' से मिटा कर दुर्योधन ने उसे वशीभूत कर लिया। कर्ण भी जीवन भर एतदर्थ मित्रवत्सल, कृतज्ञ एवं वशंवद बना रहा। यद्यपि दुर्योधन के अनेक कुकृत्यों (पाञ्चाली वस्त्रापहरण, अभिमन्यु वध) में कर्ण की हार्दिक सम्मति नहीं थी तथापि कुरुराज के उपकारों के भार से दबे कर्ण ने सदैव उसका पृष्ठपोषण किया। भगवान कृष्ण इस रहस्य से अवगत थे। यही कारण था कि वह महासमर की विभीषिका से सम्पूर्ण विश्व को बचाने के लिये एकमात्र उपाय 'कर्ण' को ही मानते थे -

हे रविसुत अलौकिक योद्धा, मैत्री भाव-समर्पित
कौरव युद्ध हेतु कृतनिश्चय, इसके बल से गर्वित।
समरविमुख बस एक बार यदि इसको मैं कर पाऊँ
तो फिर मानवता की नौका सागर-पार लगाऊँ॥
- राधेय पृ०125

परन्तु कर्ण शरणागतवत्सल था। वह 'कृतज्ञता' का अर्थ समझता था। कर्ण के उलझे व्यक्तित्व की ग्रन्थियाँ सुलझाने में कवि ने सारी प्रतिभा लगा दी है। मैं बधाई देना चाहता हूँ मिश्र जी को उनकी भावभीनी प्रतिभा की उदात्तता

Phones :
HIMACHAL PRADESH UNIVERSITY
SUMMERHILL, SHIMLA-171005

के लिये। कर्ण का व्यक्तित्व समझाने में श्री शिवकुमार मिश्र को विलक्षण सफलता मिली है। स्वयं को भगवान कृष्ण के मुँह से 'कुन्तीपुत्र' सुन कर कर्ण विचलित तो हो उठता है, परन्तु दुर्योधन का पक्ष नहीं छोड़ पाता। राजरानी कुन्ती के प्रति अपार बहुमानभाव के बावजूद वह 'राधा' के वात्सल्य एवं ममत्व को तिलांजलि नहीं दे पाता। यह उसके स्फटिकोपम चरित्र का प्रमाण है -

नहीं राज्य सम्पूर्ण धरा का, धन भी अखिल भुवन का
मोल चुका सकते ममता के सुरभित दिव्य सुमन का।
यह जड़ता सब त्याग नहीं वह अमल हमारा नाता
सौ जन्मों में भी माँगूगा प्यारी राधा माता !!
— राधेय पृ० 140

कितना विवश है सूर्यपुत्र कर्ण! वह जानता है कि अन्तिम विजय पाण्डवों की ही होगी। वह जानता है कि दुर्योधन अन्यायी है। वह जानता है कि उसने पतिव्रता पाञ्चाली का जानबूझ कर अपमान किया है और वह यह भी जानता है कि यदि धर्मराज युधिष्ठिर को यह रहस्य ज्ञात होगया कि कर्ण उनका अग्रज है तो निश्चय ही वह राजमुकुट उसके चरणों में रख देंगे। परन्तु कर्ण क्या करेगा? कर्ण भी राजमुकुट दुर्योधन को सौंप देगा! और उस स्थिति में पृथ्वी का असह्य पापभार जैसा का तैसा बना रह जायेगा। फलतः कर्ण स्वयं प्रार्थना करता है -

यह रहस्य ही रहना माधव! सुनलो इतनी विनती
अभी न हो कौन्तेयों में इस बन्धन की गिनती।
जानगये यदि धर्मराज, रणविमुख उसी क्षण होंगे
दुराचार-उन्मूलन जैसे पूर्ण कहाँ प्रण होंगे ??

बिजली होकर भी किरीट रत्न देगी इन चरणों पर
कर्म प्रयोजन को अर्पित कर मैं अपने कर्मों पर।
चला जहाँ से वहीं काल का चक्र लौट आयेगा
मानवता का चरमभाग्य - बलिदान बनी जायेगा !!

चरित्रचित्रण की दृष्टि से राधेय महाकाव्य निश्चय ही प्रशंसनीय है। परन्तु अर्थवत्ता के साथ 'सौशब्द्य' भी इस महाकाव्य को प्रशंसार्ह बनाता है। मैं तो आश्चर्यचकित हूँ कवि के छन्दोवैपुल्य तथा अलंकार-प्रयोगों को देख कर। श्लेष, लाटानुप्रास तथा यमक जैसे मनोहारात्मक अलंकारों का इस काव्य में प्रयोग कर श्री मिश्र ने रीतिकालीन काव्यसमृद्धि का स्मरण तो कराया ही है, हिन्दी कविता के सामर्थ्य को भी नये सिरे से प्रमाणित किया है। अन्यथा आज की हिन्दीकविता तो 'फक्कड़ संस्कृति' तथा 'अटलबारी कविरोंस' में उलझ कर रह गई है। 'राधेय' के परिशीलन से स्पष्ट हो जाता है कि प्रबन्ध-काव्य की भाषा कुछ और ही होती है।

इस संक्षिप्त मन्तव्य में सविस्तर कुछ कहपाने का अवकाश नहीं है। फिर भी यह अन्त में मुझे विशेषतः हर्षानुभूति होती है कि 'राधेय' महाकाव्य, अनेक संशयों के द्वार पर खड़ी हिन्दीकविता की एक मानक उपलब्धि है। कवि ने तो अपना प्रतिभारत्नाकर प्रस्तुत कर दिया, अब देखना है कि वर्तमान हिन्दीसमाज उस रत्नाकर का कितना लाभ उठा पाता है? मैं इस अनन्य सारस्वत श्रम के लिये भाई श्री शिवकुमार मिश्र को हार्दिक बधाइयाँ देता हूँ तथा उनके उत्तरोत्तर मंगलमय साहित्यिक भविष्य की कामना करता हूँ।

— अभिराज डॉ. राजेन्द्र मिश्र
१५.६.९६.

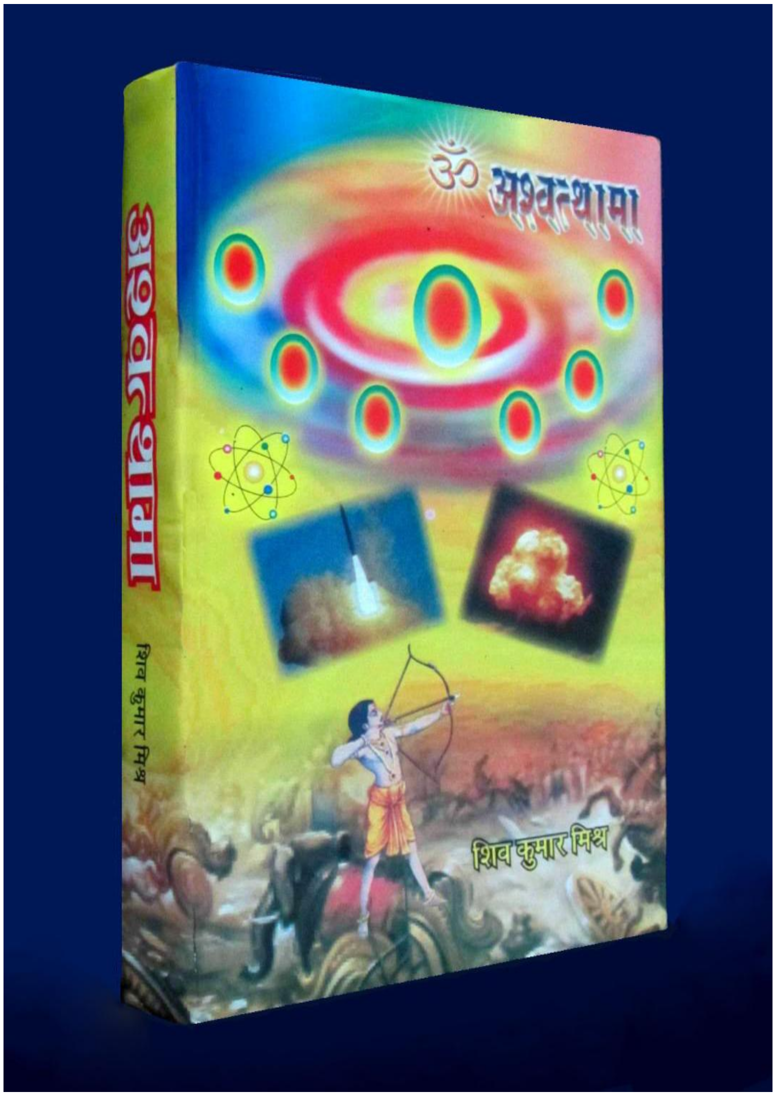
ॐ अश्वत्थामा
अश्वत्थामा
शिव कुमार मिश्र
शिव कुमार मिश्र

पूज्यवर महामहिम आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री
राज्यपाल उत्तर प्रदेश

के करकमलों द्वारा

श्री शिवकुमार मिश्र कृत 'अश्वत्थामा' (महाकाव्य)

का लोकार्पण।

तिथि एवं दिन	::	20 सितम्बर 2003, शनिवार
समय	::	पूर्वाह्न 11.30 बजे
स्थान	::	आर्मापुर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कानपुर।

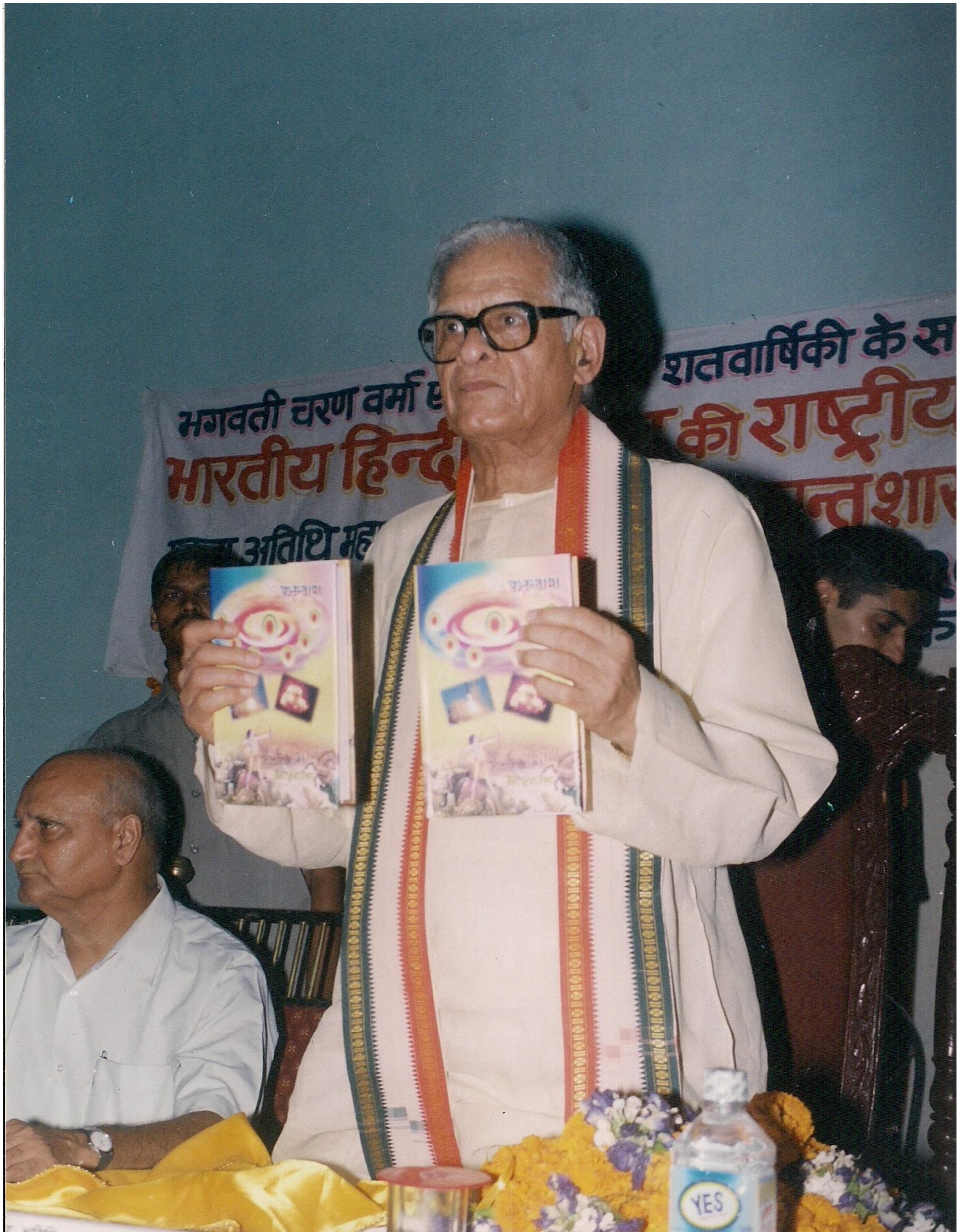
शतवार्षिकी के
भगवती चरण वर्मा
की राष्ट्रीय
भारतीय
अतिथि
YES

सेवकवात्स्यायन
Sewak-Vatsyayana

प्रिय मिश्र जी नमस्कार !

इतना कुछ लिखा जाने के बाद भी हिन्दी में महाकाव्य के लिए केवल पाँच परिप्रबन्ध गणनीय हैं, 'पृथ्वीराज-रासो', 'आल्हखण्ड', 'पद्‌मावत', 'रामचरित मानस' और 'कामायनी', और यदि केवल साहित्य के उस कालखण्ड को ही विचारणीय माना जाए जिसे अब तक आधुनिक काल ही कहा जा रहा है, तब इस काव्य-रूप के लिए 'प्रिय-प्रवास', 'साकेत', 'कामायनी' और केवल 'कृष्णायन' ही विचार करने के योग्य बच रहते हैं। कृत्रिमता और अनुकरणप्रियता ने 'कृष्णायन' तमसावृत्त कर दिया है, 'प्रियप्रवास' और 'साकेत' में आधुनिक बौद्धिकता ने, जिसका दर्शन बहुत बार ''राधेय'' और ''अश्वत्थामा'' में भी गोचरीकृत होता चलता है, काव्य की रसात्मक यात्रा को प्रतिबाधित किया है। 'कामायनी' में भी ऐसा दर्शन-मेला है कि जहाँ साधारण पाठक की बुद्धि सकपका जाती है और वह समझ नहीं पाता कि कविता यहाँ आस्वाद्‌य है कि चर्व्य। परन्तु फिर भी 'कामायनी' का सा विराट दर्शन कविता में भिगोकर आज तक कोई दूसरा कवि प्रस्तुत नहीं कर सका है। कथावस्तु क्षीण होते हुए भी कथावस्तु महान है। रूपक प्रधानता के जरिए मनु द्वारा सृष्टि के पुनर्विकास का जो उपक्रम समायोजित किया गया है वह अद्‌भुत है। 'शतपथ' के एक आख्यान का आधार लेकर, युग-प्रवृत्तियों और विशेषताओं का जैसा पूर्णप्राय प्रतिनिधित्व और स्वरूप-निरूपण यहाँ प्रसाद की विराट मेधा कर सकी है, वह अन्यत्र दुर्लभ ही है। सामयिकता को नित्य समय का वितत-वितान दे पाना प्रत्येक के वश की बात नहीं होती, जबकि किसी महाकाव्य के लिए यह एक जरूरी अवयव है। 'कामायनी' में भारतीय अर्थात मानवीय संस्कृति के मूल तत्वों का निरूपण हुआ है। अद्वैत, शैवागम और प्रत्यभिज्ञा अननर्गल और सम्यक मीमान्सा सम्भव हुई है। यहाँ फ्रायड के काम-सिद्धान्त, मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और डार्विन के विकासवाद के युग-पद्-दर्शन होते हैं। इस सबसे झुंझलाकर किसी ने 'कामायनी' को दर्शन और मनोविज्ञान का 'जंगल' भी कह डाला है। हम इसे जंगल कहें तो भी 'कामायनी' बुद्धि-विलास, रस-विलास और चिद्विलास का एक नद्वितीय और अद्‌भुत महाकाव्य है। और यह सूचना देने वाला कि महाकाव्य होने के लिए किसी कविता के शरीर का बड़ा होना जरूरी नहीं होता। यदि ऐसा होता तो निराला की 'राम की शक्ति पूजा' को कौन पूछता? कहीं-कहीं तो पद्‌मावत के एक-एक दोहे में एक-एक महाकाव्य है। पण्डित शिव कुमार मिश्र अर्थात आपका ''अश्वत्थामा'' भी 'महाकाव्य' है, ''अश्वत्थामा'' में भी 'महाकाव्य' है। रामनाथ ज्योतिषी के 'रामचन्द्रोदय', गुरूभक्त सिंह के 'विक्रमादित्य', रघुवीर शरण मित्र के 'जननायक', विद्याधर महाजन के 'गाँधी-चरित-मानस' जैसे अनगिनत हिन्दी महाकाव्यों से कहीं अधिक श्रेष्ठ महाकाव्य आपका ''अश्वत्थामा'' है।

''अश्वत्थामा'' के कवि में विद्या है, श्रम है, प्रतिभा है, प्रयत्न है, उत्साहजनित आकांक्षा है, प्रबन्ध-परिबंध है और कवि-धर्म की समायोजन-कर्त्री योग्यता है। आरम्भ में जिन चिरन्जीवी महाकाव्यों की जो चर्चा यहाँ की गई वह निरर्थ नहीं है। मदभिप्राय रहा है कि आज के यशःप्रार्थी कवि महाकवि के लिए प्रणयन-पूर्व उधर भी देखें तो उनकी आशी-राशियों से सम्भव होने वाले नए युग भी अधिक कृतकृत्य अनुभव कर सकेंगे। गुरुजन व्यक्तियों में ही नहीं होते, कृतियों में भी होते हैं। 'महाभारत' 'अश्वत्थामा' जैसी असंख्य कृतियों का गुरू है। जैसे बड़ा व्यक्ति आशीर्वाद दे सकता है, बड़ी एवं पूर्वज- कृति भी आशीर्वाद देती हैं। तब हम और हमारी कृतियाँ, हमारे काव्य-व्यापार खिल उठते हैं। पूर्वज-कृतियों के प्रति प्रेरणा के लिए प्रणेता के हृदय में सच्चा कृतज्ञ भाव भी होना चाहिए। इस कृतज्ञ भाव का समूचा और सबसे अव्वल उदाहरण 'लासानी रामचरित मानस' है। पर मैंने देखा है कि आज के अधिसंख्यक कवियों की कृतियाँ पूर्वज-कृतियों से जन्म और प्रेरणा तो लेती हैं पर उनके प्रति कृतज्ञ भाव नहीं रखतीं। इन कृतियों के कवि अपनी कृतियों को पूर्वज-कृतियों से भी आगे ले जाने का दम्भ पालते हैं या फिर उनसे बराबरी करने की गुस्ताखी करते हैं। यही कारण रहा है कि 'महाभारत' या 'रामायण' के उपजीवी काव्यों में 'राम-चरित-मानस' और एक सीमा तक 'सूर-सागर' को छोड़कर अन्य किसी एक को भी बीजपरम्परा या विन्दुपराम्परा, - किसी एक परम्परा से भी पूर्वज-कृति का गोत्र-नाम नहीं मिला, अन्यथा हिन्दी में भी ऐसा न होता कि एक-एक तरह की क्वचित-क्वचित एक ही एक कृति रह जाती। 'गुरुग्रन्थ साहब' की पूजा का विधान पूर्वज-कृतिता के प्रति कृतज्ञता-प्रकाश का ही नामान्तरण है और 'आरति श्री रामायण जी की' जैसे पवित्र और अनवद्य पूजाऽऽचार भी। आप ''अश्वत्थामा'' के कवि हैं अर्थात दृढ़ता, वाभ्रव्य, दर्द, भोग, भोग-परिहार और आत्म-मन्थन के कवि हैं। आपका महाकाव्य चरित्रोद्धार का भिषगुद्धरण है। इस युग में चरित्रोद्धार की प्रवृत्ति कवियों, सुधारकों और पर्मिसिव होती हुई सोसाइटी के क्रिमिनल-कोड-धाराओं में सारी दुनिया में बहुत अधिक दिखाई दी है। यथार्थ्यमूलक कथा-साहित्य, फिक्शन ने तो इसका भण्डारा ही कर दिखाया है। रूढ़-परम्पराओं के बन्धन जब शिथिल होने लगते हैं तब ऐसा होता है। बहुत से अपराघ और अनैतिक कहे जाने वाले आचरणों को जीवन की प्रकृति मानकर स्वीकृति प्रदान कर दी जाती है और अनेक अपराद्धभावों और अनैतिकताओं एंव विकृत-कृत-कृत्यों व्यपदेश-कारण कल्पित कर लिए जाते हैं। आपने भी ''अश्वत्थामा'' के आचरण-चरण-प्रक्षालन में इस ब्राह्मण चिरयुवा के साथ युगीन पाक्षपात किया है। सप्तर्षि-सभा आपकी भव्य एवं चिरविश्वसनीय परिकल्पना है। ''सप्तैते चिरजीविनः'' ऋषि ही हैं, अतः मैंने इन्हें भी सप्तर्षि कहा। ये सब चाहे चिरन्जीवी न भी हों, पर आपका यह सभा-स्वप्न चिरन्जीव्य एवं साम्बलिकता सम्प्रदायी है।

कवि-वर्णना को काव्य कहा गया है। आपमें मनोभिरमणीय कवि-वर्णना-निपुणता है। ''अश्वत्थामा'' में यहाँ सधैर्य चलने वाले आपके वर्णन काव्य लोक-विहार के लिए पाठक को विवश करते हैं। आपने बन्धों, उपबन्धों को सजाते रहने के अन्नवरत स्वप्रयत्न से काव्य के बहिरंग को विच्छित्ति की सुदीक्षा दी है। अतः कवि से अधिक आप कवि पण्डित प्रतीत होते हैं। अठारह पुराणों जैसे आपके अठारह सर्ग महाकाव्य को वजन देने वाले हैं। प्रत्येक सर्ग की छन्द संख्या, प्रत्येक सर्ग का नाम, वहीं प्रत्येक सर्ग की कथावस्तु का उल्लेख यह सुगुण पाठक को उसी भाँति साहाय्य प्रदान करने वाले हैं, जैसे स्थाने-स्थाने इस काव्य में भी उत्साहपूर्वक अप्रचलित-प्रायः शब्दों का अनूरु-संयोजन पाठकों को किन्चित क्लेश देने वाला है। द्रोण-कृपी के 'अश्वत्थामा' सदृश्य पात्रों का चरित्र आख्यात करने वाले ऐसे महाकाव्यों के पाठक सामान्यजन नहीं होते हैं, अतः यह कृति विशिष्टाऽतिविशिष्ट ही कही जायेगी। छन्द संख्या आपने हिन्दी में दी है तो पृष्ठ संख्या भी नागरी अंकों में ही दी जा सकती थी। आपने जो रैपर, इनर-कवर फ्लैप कुछ कृति परिचयात्मक पंक्तियाँ दी हैं उनकी यहाँ कोई जरूरत न थी। जगह खाली हो सकती थी या फिर आपकी ही रचित यहीं की कोई सटीक काव्य-पंक्तियाँ हो सकती थीं। प्रत्येक कृति के लिए भूमिका की जरूरत नहीं होती है, होती हो तो कृतिकार इसे स्वंय लिखे अन्यथा फिर किसी अन्य एक से लिखवाया जाना चाहिए। भूमिकात्मक वक्ततव्यों की एकाधिक संख्या किसी कृति का कोई अतिरिक्त महत्व-बर्द्धन नहीं करती है। आपके आत्म-निवेदन का आरंभिक प्रधान हिस्सा हमारे जैसे लोगों का भरपूर ज्ञान बढ़ने वाला है पर किसी काव्य पृष्ठि के बजाय किसी युद्ध की भूमिका का सा लगता है। आपने महाकाव्यों से शुरूआत की है। प्रभु से कामना है कि आपके सकल कार्य महान हों। ''चाणक्य'' पर जो लिखें वह और अधिक महान हो। ग्रन्थ सम्प्रदान कर इस सुकाव्य का आपने मुझे जो आस्वादावसर प्रदान किया है, उसके लिए मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। मैं तो कविता का सदा से अभ्यर्थी विद्यार्थी हूँ और सभी कवि मेरे लिए प्रणम्य हैं, आप भी। इस समय साहित्य-सुधी श्री शिवबाबू मिश्र भी आपके प्रति-वेश में हैं। दोनों ही मिश्र बन्धु शिव मिश्र हैं पर अपने व्यक्तित्व के लिए शिवकुमार मिश्र को पंडित कुमार मिश्र और शिवबाबू मिश्र को पंडित शिव मिश्र के रूप में देखता हूँ। प्रभु कृपया सपरिवेश आप आनंदित होंगें ।

आपका

सेवकवात्स्यायन
कानपुर
१.६.२००४

पण्डित शिव कुमार मिश्र,
आयुध निर्माणी कानपुर

डा० मुक्तेश्वर नाथ तिवारी,
रीडर, हिन्दी विभाग,
विश्वभारती, हिन्दी भवन,
शान्तिनिकेतन-७३१२३५

महाभारत के मिथकीय चरित्र अश्वत्थामा को काव्यनायक बनाकर श्री शिव कुमार मिश्र ने "अश्वत्थामा" प्रबन्ध-काव्य प्रणीत किया है। श्री शिव कुमार मिश्र व्यापक फलक और सुविस्तृत मनोलोक के प्रबन्धकार-कवि हैं। कर्ण जैसे एक दूसरे महाभारतीय चरित्र पर उनका पहले से ही प्रकाशित (*1995* ई.) प्रबन्ध-काव्य "राधेय" है। कविताश्री का मधुमय दान स्वान्तः सुखाय कैसे रह सकता है? "अश्वत्थामा" परान्तः सुखाय है और प्रबुद्ध पाठकों के विचारोत्तेजन के लिए इसमें यथेष्ठ सामग्री है। अश्वत्थामा के लगभग प्रत्येक जैविक और कार्मिक पक्ष की कृति में जीवन्त आलोचना हुई है। प्रबन्ध अतीतोन्मुख रहकर वर्तमान की कुछ विसंगतियों और प्रच्छन्नताओं पर उँगली रखता है। इसलिए प्रबन्ध का पाठ इतिहास रस के साथ-साथ हमारी समकालिकता का भी पाठ है। समकालिकता को अभिव्यंजित करने की मूल विधि जहाँ इन दिनों मुक्तकों के माध्यम से हथियाई गई है, और जो विधि कवि-कर्म के क्षेत्र में बहुधा बैठे-ठाले के कर्म की सूचक है; भावों और कथानकों के लिए जहाँ बाट जोहना पड़ता है और यह भी कि कोरी वैयक्तिकतापरक आत्माभिव्यंजन में कवि-कर्म की विश्रान्ति होती है, वहीं प्रबन्ध का औचित्य झूठा औचित्य नहीं होता। नियम, अनुशासन, बाह्याभिमुखता, शैली-शिल्प की अनेकमुखता, बहुरसत्व-साधना और अन्ततः 'वनस्थली' निर्मित करना प्रबन्ध की अनिवार्य आवश्यकताएं होती हैं। प्रबन्ध-रचना के लिए हमेशा बड़ी प्रतिभा की आवश्यकता रहती है जो पाठकों को कथा-रस में निमज्जित करने के साथ महदुद्देश्य की सृष्टि दिखाकर बौद्धिक और हार्दिक मनस्तोष प्रदान करती है। विषय और शैली के औदात्य प्रबन्धकार के औदात्य को चिह्नित करने लगते हैं। श्री शिव कुमार मिश्र प्रबन्ध की सभी आवश्यक शर्तों को पूरा करने वाले हमारे समय के दुर्लभ कवि हैं। अपनी छटपटाहट की अभिव्यक्ति मिश्र जी मुक्तकों के द्वारा नहीं कर सकते क्योंकि वे वैविध्यपरक विचारों की उदात्तता से दीप्त हैं। यह भी कि इतिहास और पुराकथाओं को जानने के परिणाम-स्वरूप एतद्विषयक अपनी अभिरुचि का प्रदर्शन कृतिकार को सदोष नहीं बनाता बल्कि उसके व्यक्तित्व का पता देता है। यह धारा को पलटने का उद्यम है। समकालीन हिन्दी कविता में महाकाव्य प्रणयन स्थगित है; यह कोई प्रवृत्ति नहीं दी गई है। इसके मोटे कारणों में कवि के गुरु-गम्भीर-धीर व्यक्तित्व का अभाव है। महाकवि अध्यवसायी होता है। बीसवीं सदी में यह अध्यवसाय जयशंकर प्रसाद (कामायनी), सुमित्रानंदन पंत (लोकायतन) और रामधारी सिंह दिनकर (उर्वशी) में था। मिश्र जी में दिनकर जी का सा अध्यवसाय है प्रबन्ध-रीति का अनुसरण "अश्वत्थामा" में प्रत्येक कोण से हुआ है। प्रबन्ध की काव्यभाषा को आधार बनाकर कहा जा सकता है भाषा के धरातल पर भी औदात्य को छुआ गया है। भाषा विषयनुसारी है और ऐतिहासिक मिथक को संप्रेषित करने के माध्यम -

गुण के रूप में यथेष्ट सम्पन्न और संभ्रान्त है। यह आश्वस्तिकर है कि श्री शिव कुमार मिश्र ने हिन्दी भाषा की व्यापक सम्भावनाओं का; उपयोग-विस्तार का निदर्शन विवेच्य महाकाव्य में कर डाला है। संस्कृति, सभ्यता, मानव-मूल्य, नैतिकता आदि विषयों पर आबद्ध रहकर चलेनवाली काव्य-दृष्टि रखकर मिश्र जी ने कृति को औदात्य प्रदान किया है। हमारे समय की प्रश्नाकुलताएँ, सप्रसंग बेचैनियाँ और छटपटाहटें कृति में यथावसर झलक उठती हैं। इसलिए कृति प्रसंग-च्युत नहीं है। हृदय की सत्ता अथवा भावना और ज्ञान से दूर तलवारों के बल पर दर्प-स्फीत शासक के सीमा-विस्तार की लालसा को कवि ने कोई मूल्य ही नहीं ठहराया है। कृति मनुष्योचित कर्म की उत्तेजना देती है :

न उर का मोल जो पहचानता हो।
स्वर्ण ही तौलना जो जानता हो।
परख कैसे उसे फिर ज्ञान की हो।
पड़ी जिसको सदा असि-म्यान की हो।

कृति और कृतिकार दोनों यशस्वी हों।

डा० मुक्तेश्वर नाथ तिवारी
१५.३.२००४